ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

मानवाधिकार एवं उचित सत्ता

डॉ. प्रकाश चंद मीना

सह-आचार्य, राजनीति विज्ञान, राजकीय महाविद्यालय, राजगढ़, अलवर

सार

संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में यह कथन था कि संयुक्त राष्ट्र के लोग यह विश्वास करते हैं कि कुछ ऐसे मानवाधिकार हैं जो कभी छीने नहीं जा सकते; मानव की गरिमा है और स्त्री-पुरुष के समान अधिकार हैं। इस घोषणा के परिणामस्वरूप संयुक्त राष्ट्र संघ ने 10 दिसम्बर 1948 को मानवाधिकार की सार्वभौमिक घोषणा अंगीकार की।इस घोषणा से राष्ट्रों को प्रेरणा और मार्गदर्शन प्राप्त हुआ और वे इन अधिकारों को अपने संविधान या अधिनियमों के द्वारा मान्यता देने और क्रियान्वित करने के लिए अग्रसर हुए। राज्यों ने उन्हें अपनी विधि में प्रवर्तनीय अधिकार का दर्जा दिया।10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की समान्य सभा ने मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा को स्वीकृत और घोषित किया। इसका पूर्ण पाठ आगे के पृष्ठों में दिया गया है। इस ऐतिहासिक कार्य के बाद ही सभा ने सभी सदस्य देशों से पुनरावेदन किया कि वे इस घोषणा का प्रचार करें और देशों अथवा प्रदेशों की राजनैतिक स्थिति पर आधारित भेदभाव का विचार किये बिना, विशेषतः विद्यालयों और अन्य शिक्षा संस्थाओं में, इसके प्रचार, प्रदर्शन, पठन और व्याख्या का प्रबन्ध करें।इसी घोषणा का सरकारी पाठ संयुक्त राष्ट्रों की इन पाँच भाषाओं में प्राप्य है: अंग्रेजी, चीनी, फ्रांसीसी, रूसी और स्पेनी। अनुवाद का जो पाठ यहाँ दिया गया है, वह भारत सरकार द्वारा स्वीकृत है।मानव अधिकार का अर्थ सब जीवों में मानव ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ और सर्वोत्तम कृति है। अत: मानव द्वारा ही बनाए गए इस समाज में, उसे मानवीय मूल्यों और संबंधों को प्राथमिकता देने का अधिकार दिया जाना चाहिए। मानव अधिकार वस्तुतः वो मूल या नैसर्गिक अधिकार हैं, जो हर मनुष्य को प्रकृति द्वारा प्रदत्त है। मानव अधिकार जीवन की वे दषायें हैं जो मानव को समाज एवं कानून सभी कार्यों को सम्पादित करने की पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं। अन्य शब्दों में कहा जा सकता है कि ऐसे अधिकार जो प्रत्येक मनुष्य को जन्मजात प्राप्त होते है, मानव अधिकार कहलाते हैं।

परिचय

मानवाधिकार का सबसे जघन्य उल्लंघन तो नस्लवादी भेदभाव है जिसमें आज अमरीका आकंठ डूबा हुआ है। सारे आंकड़े और जीवन का यथार्थ यह तथ्य संप्रेषित कर रहे हैं कि अमरीका में नस्लवादी भेदभाव चरमोत्कर्ष पर है किंतु चैनलों से वह गायब है। प्रिंट मीडिया से गायब है सिर्फ नेट पर कुछ स्थानों पर इसके बारे में जानकारियां और ब्यौरे मिलते हैं। मीडिया के लिए मानवाधिकार विशुद्ध माया है, प्रचार खेल है। जिन देशों में मानवाधिकार नहीं हैं वहां पर हल्ला इस बात को लेकर है कि मानवाधिकार नहीं हैं, किंतु जिन देशों के संविधान में मानवाधिकार हैं [1,2] वहां पर उनका उल्लंघन खूब हो रहा है। किंतु प्रतिवाद का पता नहीं है। हठात् किसी मुद्दे पर छोटा सा प्रतिवाद होता है और मीडिया शोर मचाना शुरू कर देता है और फिर कुछ समय के बाद शोरगुल बंद हो जाता है। कोई भी राज्य मानवाधिकारों को लागू करना नहीं चाहता। मानवाधिकार कागज पर जितने अच्छे लगते हैं। इनको व्यवहार में पालन करते ही राजसत्ता के साथ अन्तर्विरोध शुरू हो जाता है। मानवाधिकार क्या हैं ? व्यवहार में इनका कैसे पालन किया जाए ? मानवाधिकारों के आदर्श राज्य के रूप में किस देश को मानक मानते हैं ? जिन देशों ने मानवाधिकारों का सबसे ज्यादा हल्ला मचाया हुआ है उन्हीं देशों के द्वारा मानवाधिकारों का सारी दुनिया में हनन हुआ है। मानवाधिकार सुंदर यूटोपिया है, वैसे ही जैसे समाजवाद था। मानवाधिकार और लोकतंत्र का मौजूदा दौर में कोई विकल्प नहीं है। मानवाधिकार में दो पदबंध हैं 'मानव' और 'अधिकार' इन दोनों पदबंधों को लेकर हमारी समझ क्या है ? किंतु

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

इन दोनों पदबंधों के बीच में दो चीजें और हैं एक है 'सत्ता' और दूसरी चीज है 'मानवीय अस्तित्व'। मानवीय अस्तित्व के बुनियादी समाधानों को दरकिनार करके सिर्फ अभिव्यक्ति की आजादी के आधार पर मानवाधिकार के बारे में चर्चा करना बेमानी है। सत्ता और मानवीय अस्तित्व का धर्मनिरपेक्षीकरण मानवाधिकार की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है। अभिव्यक्ति की आजादी (Freedom of expression) से भी ज्यादा महत्वपूर्ण है मानवीय अस्तित्व को बचाए रखने की बुनियादी संरचनाओं का निर्माण। मानवाधिकारों में शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान, पर्यावरण, अल्पसंख्यक, स्त्री, मीडिया, राजनीतिक स्वतंत्रता, राष्ट्रीय संप्रभुता की रक्षा आदि आते हैं। इस कार्य में सत्ता और मीडिया की सकारात्मक भूमिका होनी चाहिए। मानवाधिकार कोई कागजी घोषणा नहीं हैं। बल्कि मनुष्य के अस्तित्व से जुड़े हैं। मनुष्य के अस्तित्व रक्षा के जितने भी उपाय और तंत्र हैं उनका मानवाधिकारों के साथ गहरा संबंध है। कहीं पर यह संबंध दोस्ताना है कहीं पर शत्रुतापूर्ण है। मनुष्यों के अधिकार का संबंध अब पशुओं और प्रकृति के अधिकार और अस्तित्व रक्षा के साथ जोड़ दिया गया है। मानवाधिकार वह व्याधि है अथवा वह चाशनी है जिसमें आप कोई भी चीज डुबो दीजिए सब कुछ मीठा लगेगा। मानवाधिकार मन के गुलगुले हैं। इन्हें सब खाना चाहते हैं किंतु इनको हासिल करने के लिए कीमत नहीं देना चाहते। बिना कीमत अदा किए मानवाधिकार नहीं मिलते और जब मानवाधिकार मिलते हैं [3,4] तो फिर से उल्लंघन शुरू हो जाता है। मानवाधिकार पाना और तोड़कर फिर पाना यह सतत प्रक्रिया है। मानवाधिकार हैं इसका प्रमाण क्या है ? मानवाधिकारों का हनन (Human rights abuses) हुआ है इसका प्रमाण क्या है ? अधिकार और हनन में कभी न खत्म होने वाला संग्राम चलता रहा है। मानवाधिकारों का विकास कभी भी सामाजिक- आर्थिक विकास के बिना संभव नहीं। मानवाधिकार सिर्फ अभिव्यक्ति की आजादी नहीं है। मानवाधिकार सिर्फ राजनीतिक दल बनाने का अधिकार नहीं है। मानवाधिकारों के सभी प्रचलित मानक जिन देशों में संवैधानिक तौर पर मिलते हैं वहां पर भी मानवाधिकार हनन होता है और जहां पर अभिव्यक्ति की आजादी नहीं है वहां पर अभिव्यक्ति की आजादी का ज्यादा हनन होता है और हंगामा ज्यादा होता है। मानवाधिकारों का संबंध मानवीय अस्तित्व रक्षा के बुनियादी लक्ष्यों को अर्जित करने के साथ है। मानवाधिकार सिर्फ अभिव्यक्ति और राजनीतिक आजादी तक ही सीमित नहीं है। इसमें मानवीय अस्तित्व के बुनियादी सवाल भी शामिल हैं। मानवाधिकारों का एकसिरा मनुष्य के धर्मनिरपेक्ष वातावरण के निर्माण से जुड़ा है तो दूसरा सिरा राष्ट्रीय संप्रभुता की रक्षा से जुड़ा है। मजेदार बात यह है कि अमेरिका मार्का मानवाधिकारपंथी कभी भी मानवाधिकारों को धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रीय संभुता के साथ जोड़कर नहीं देखते। बल्कि मानवाधिकारों की रक्षा की आड़ में अधर्मी तत्ववादियों से लेकर तमाम किस्म की प्रतिक्रियावादी शक्तियों को संरक्षण देने का काम अमेरिका करता रहा है। साथ ही राष्ट्रीय संप्रभुता को निशाना बनाता रहा है।[5,6]

दूसरी बात यह कि मानवाधिकारों को मात्र लोकतंत्र से जोड़कर देखना भी मानवाधिकारों को शक्ति प्रदान नहीं करता। लोकतंत्र और मानवाधिकार हों, किंतु धर्मनिरपेक्षता न हो तो मानवाधिकारों के नाम पर पीछे की दिशा में ले जाने वाली ताकतें दुरूपयोग करने लगती हैं। अफगानिस्तान, ईराक, पाकिस्तान आदि इसके आदर्श उदाहरण हैं।मानवाधिकारों का आधुनिक मनुष्य के निर्माण की प्रक्रियाओं के साथ गहरा संबंध है। आधुनिक मनुष्य वह है जो धर्मनिरपेक्ष है, लोकतांत्रिक है, अन्य की रक्षा के प्रति वचनबद्ध है, बहिष्कारवादी नहीं है। मानवीय सभ्यता के विकास की सभी उपलब्धियों को बचाने और आगे जाने के भावबोध से सन्नद्ध है।

मनुष्य समाज में अकेला ही नहीं, वरन् अन्य लोगों के साथ रहने के दौरान वह दूसरों को प्रभावित भी करता है और स्वयं भी दूसरों से प्रभावित होता है। प्रभाव का तात्पर्य है-दूसरों की नीतियों को प्रभावित करना। प्रभाव का अर्थ है-एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार बदलना या कार्य करवाना। प्रभाव के दो रूप हैं- 1. शक्ति और 2. सत्ता। यदि एक व्यक्ति अपनी बात मनवाने में बल प्रयोग करता है अथवा बल प्रयोग करने की धमकी देता है तो वह शक्ति कहलाती है। जब शक्ति को वैधानिक स्वीकृति मिल जाती है तो उसे सत्ता कहते हैं। प्रत्येक संगठित समूह में सत्ता के तत्व मूल रूप से मौजूद रहते हैं। संगठित समूह में तीन प्रकार के व्यक्ति होते नोट हैं-1. साधारण व्यक्ति, 2. वे व्यक्ति जिनके पास उत्तरदायित्व होता है और

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

इसके साथ उनके पास सत्ता भी होती है जिसके माध्यम से वे अपने दायित्व का निर्वाह करते हैं, 3. प्रधान प्रशासक। सत्ता की दृष्टि से समूह की रचना इसी प्रकार की होती है जिसमें ये तीनों तत्व पाए जाते हैं। [7,8]

विचार-विमर्श

अगर कोई किसी से अपनी मर्ज़ी के आधार पर कुछ ऐसे काम करवा सकता है जो वह अन्यथा नहीं करता, तो इसे एक व्यक्ति की दूसरे पर सत्ता (Power) की संज्ञा दी जाएगी। सत्ता की यह सहज लगने वाली परिभाषा रॉबर्ट डाह्ल की देन है। इसका सूत्रीकरण केवल व्यक्तियों के संदर्भ में किया गया है। जैसे ही समूह और सामूहिकता के दायरे में सत्ता पर ग़ौर किया जाता है, कई पेचीदा और विवादास्पद प्रश्न खड़े हो जाते हैं। समझा जाता है कि सामूहिक संदर्भ में सत्ता का आशय ऐसे फ़ैसले करने से है जिन्हें मानने के लिए दूसरे लोग मजबूर हों। उदाहरण के लिए, अध्यापक द्वारा किये गये निर्णय उसकी कक्षा के छात्र मानते हैं और परिवार के सदस्य माता-पिता के फ़ैसलों के आधार पर चलते हैं। लेकिन, राजनीति, अर्थव्यवस्था और समाज-नीति के मामलों के लिए सत्ता की यह परिभाषा अपर्याप्त साबित होती है।[9,10]

समाज-विज्ञान के छात्र यह पूछ सकते हैं कि समाज के संदर्भ में सत्ता किस के पास रहती है, किसके पास रहनी चाहिए और किस आधार पर उसका प्रयोग किया जाना चाहिए? इन प्रश्नों के प्रकाश में आधुनिक विचार के दायरे में सत्ता के प्रश्न पर गहराई से चिंतन-मनन किया गया है। सत्ता से जुड़े अहम सवालों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि सत्ता समाज में व्यापक और समान रूप से वितरित है या किसी शासक वर्ग या किसी 'पॉवर इलीट' के हाथों में केंद्रित है? सत्ता का प्रश्न उस समय और जटिल हो जाता है जब सत्ता और उसका प्रयोग करने से जुड़े इरादे के समीकरण पर ग़ौर किया जाता है। पार्टियाँ, सरकार, हित-समूह और बड़े-बड़े कॉरपोरेशन सत्ता का इस्तेमाल करते हुए देखे जा सकते हैं। यह सत्ता के इरादतन प्रयोग के उदाहरण हैं। पर क्या यही बात एक विज्ञापक के लिए भी कही जा सकती है? उसका इरादा तो महज़ अपने उत्पाद की बिक्री बढ़ाना है। तो फिर उसके द्वारा जारी विज्ञापन उपभोक्ताओं पर अपनी सत्ता किस तरह से कायम करता है? उपभोक्ता उस विज्ञापन के प्रभाव में कुछ ख़ास तरह के मूल्यों के हक में क्यों झुक जाते हैं? स्पष्ट है कि सत्ता के 'अभिप्रेत' रूपों के अलावा भी कुछ ऐसे रूप हैं जिन्हें सत्ता के 'संरचनागत' रूपों की संज्ञा दी जा सकती है।

स्टीवन ल्यूक्स ने सत्ता के तीन आयामों की चर्चा करके उसके कई पहलुओं को समेटने की कोशिश की है। उनके अनुसार सत्ता का मतलब है निर्णय लेने का अधिकार अपनी मुट्ठी में रखने की क्षमता, सत्ता का मतलब है राजनीतिक एजेंडे को अपने पक्ष में मोड़ने के लिए निर्णयों के सार को बदल देने की क्षमता और सत्ता का मतलब है लोगों की समझ और प्राथमिकताओं से खेलते हुए उनके विचारों को अपने हिसाब से नियंत्रित करने की क्षमता।[11]

रॉबर्ट डाह्ल यह नहीं मानते कि निर्णयों को प्रभावित करने की क्षमता किसी सुपरिभाषित 'शासक अभिजन' या रूलिंग क्लास की मुट्ठी में रहती है। 1963 में प्रकाशित अपनी रचना हू गवर्न्स? में डाह्ल ने अमेरिका के न्यू हैविंस, कनेक्टीकट का अध्ययन पेश किया। इसमें उन्होंने पहले अपने लिहाज़ से निर्णय के तीन प्रमुख क्षेत्रों (शहरी नवीकरण, सार्वजनिक शिक्षा और राजनीतिक उम्मीदवारों का चयन) को छाँटा, निर्णय-प्रक्रिया में शामिल लोगों और उनकी प्राथमिकताओं की शिनाख्त की और फिर उन लोगों द्वारा किये गये फ़ैसलों का उनकी प्राथमिकताओं से मिलान किया। डाह्ल ने यह तो पाया कि आर्थिक और राजनीतिक रूप से ताकतवर लोगों की आम लोगों के मुकाबले फ़ैसलों में ज़्यादा चलती है, पर उन्हें अभिजनों के किसी स्थाई समूह द्वारा फ़ैसले करने या उन्हें प्रभावित करने के सबूत नहीं मिले। वे इस नतीजे पर पहुँचे कि निर्णयों को प्रभावित करने में सत्ता की भूमिका तो होती है, पर सत्ता एक नहीं बल्कि कई केंद्रों में होती हैं। दाह्ल की मान्यता है कि अगर इसी तरह से सत्ता के स्थानीय रूपों के अध्ययन कर लिए जाएँ तो उसके राष्ट्रीय स्वरूप के बारे में नतीजे निकाले जा सकते हैं।

राजनीतिक एजेंडा अपने हिसाब से बनवाने में सत्ता के इस्तेमाल की शिनाख्त करना थोड़ा मुश्किल है। इस प्रक्रिया में ज़ोर फ़ैसले करने पर कम और दूसरों को फ़ैसलों में शामिल होने से रोकने या किसी ख़ास मत को व्यक्त होने से रोकने पर ज़्यादा

DOI: 10.15680/IJIRSET.2014.0310113

रहता है। सत्ता की इस भूमिका को समझने के लिए आवश्यक है कि स्थापित मूल्यों, राजनीतिक मिथकों, चलन और संस्थाओं के काम करने के तरीकों पर ध्यान दिया जाए। इनके ज़रिये किसी एक समूह का निहित स्वार्थ दूसरे समूहों पर हावी हो जाता है और कई मामलों में उन समूहों को अपनी बात कहने या निर्णय-प्रक्रिया में हिस्सेदारी का मौका भी नहीं मिल पाता। अक्सर यथास्थिति के पैरोकार परिवर्तन की वकालत करने वालों को इन्हीं तरीकों से हाशिये पर धकेलते रहते हैं। उदार-लोकतांत्रिक राजनीति की प्रक्रियाओं को अभिजनवादियों द्वारा ऐसे फ़िल्टरों की तरह देखा जाता है जिनके ज़रिये रैडिकल प्रवृत्तियाँ छँटती चली जाती हैं।[12,13]

सत्ता का तीसरा चेहरा यानी लोगों के विचारों को नियंत्रित करके अपनी बात मनवाने की प्रक्रिया लोगों की आवश्यकताओं को अपने हिसाब से तय करने की करामात पर निर्भर है। हरबर्ट मारक्यूज़ ने अपनी विख्यात रचना वन- डायमेंशनल मैन (1964) में विश्लेषण किया है कि क्यों विकसित औद्योगिक समाजों को भी सर्वसत्तावादी की श्रेणी में रखना चाहिए। मारक्यूज़ के अनुसार हिटलर के नाज़ी जर्मनी में या स्टालिन के रूस में सत्ता के आतंक का प्रयोग करके सर्वसत्तावादी राज्य कायम किया गया था, पर औद्योगिक समाजों में यही काम आधुनिक प्रौद्योगिकी के ज़रिये बिना किसी प्रत्यक्ष क्रूरता के लोगों की आवश्यकताओं को बदल कर किया जाता है। ऐसे समाजों में टकराव ऊपर से नहीं दिखता, पर इसका मतलब सत्ता के व्यापक वितरण में नहीं निकाला जा सकता। जिस समाज में विपक्ष और प्रतिरोध नहीं है, वहाँ माना जा सकता है कि मनोवैज्ञानिक नियंत्रण और जकड़बंदी के बारीक हथकण्डों का इस्तेमाल हो रहा है।सत्ता की अवधारणा पर विचार करने के लिए ज़रूरी है कि उसके मार्क्सवादी, उत्तर-आधुनिक, नारीवादी आयामों और हान्ना अरेंड्ट द्वारा प्रतिपादित सत्ता की वैकल्पिक धारणा पर भी ग़ौर कर लिया जाए।मार्क्सवादी विद्वान मानते हैं कि वर्गों में बँटे समाज में (जैसे कि पूँजीवादी समाज) शासक वर्ग का उत्पादन के साधनों पर कब्ज़ा होता है और वह मज़दूर वर्ग पर अपनी सत्ता थोपता है। पूँजीवादी वर्ग की सत्ता न केवल विचारधारात्मक, बल्कि आर्थिक और राजनीतिक भी होती है। मार्क्स का विचार था कि किसी भी समाज में विचारों, मूल्यों और आस्थाओं के प्रधान रूप शासक वर्ग के अनुकूल होते हैं। मज़दूर वर्ग के मानस पर उन्हीं की छाप होती है जिसका नतीजा श्रमिकों की 'भ्रांत चेतना' में निकलता है। चेतना के इसी रूप के कारण मज़दूर अपने शोषण की असलियत को पहचान नहीं पाते। इसीलिए उनके 'वास्तविक' हित यानी पूँजीवादी के उन्मूलन और उनके 'अनुभूत' हित में अंतर बना रहता है। लेनिन की मान्यता थी कि पूँजीवादी विचारधारा की सत्ता के कारण मेहनतकश वर्ग ज़्यादा से ज़्यादा केवल 'ट्रेड यूनियन चेतना' ही प्राप्त कर सकता है। अर्थात् वह पूँजीवादी व्यवस्था के दायरे के भीतर अपनी जीवन-स्थितियाँ सुधारने से परे नहीं जा पाता। मिशेल फ़ूको ने अपने विमर्श में सत्ता और विचार-प्रणालियों के बीच सूत्र की तरफ़ ध्यान खींचा है। फ़ूको विमर्श को सामाजिक संबंधों और आचरणों की ऐसी प्रणाली के रूप में देखते हैं जो अपने दायरे में रहने वाले लोगों को अपने हिसाब से तात्पर्य थमाती रहती है। चाहे मनोचिकित्सा हो, औषधि हो, न्याय प्रणाली हो, या कारागार, अकादमीय अनुशासन या राजनीतिक विचारधाराएँ हों, फ़ूको की निगाह में ये सभी विमर्श की प्रणालियाँ हैं और इस नाते सत्ता के रूप हैं। फ़ूको के मुताबिक आधुनिक युग में सत्ता किसी को कुछ करने से नहीं रोकती, बल्कि अस्मिताओं और आत्मपरकताओं की रचना करती है। सत्ता का राज्य या शासक वर्ग जैसे कोई एक केंद्र नहीं होता, बल्कि वह उसी तरह पूरी व्यवस्था में प्रवाहित होती रहती है जिस तरह शरीर में धमनियों द्वारा रक्त प्रवाहित होता है। इस प्रक्रिया का नियंत्रण 'शासकीयता' के ज़रिये किया जाता है। एक विशाल नौकरशाही तंत्र द्वारा अननिगनत तरीके अपना कर लोगों का वर्गीकरण किया जाता है। समाज को उत्तरोत्तर संगठित और समरूपीकृत करते हुए उन पर निगरानी के विभिन्न रूप (आइडेंटिटी कार्ड्स, पासपोर्ट आदि) थोपे जाते हैं। इस प्रक्रिया में लोग तरह-तरह की आत्मपरकताएँ (हिंदू-मुसलमान, भारतीय-पाकिस्तानी, शिक्षित-निरक्षर, स्वस्थ- रोगी, स्त्री-पुरुष) जज़्ब कर लेते हैं। इसी आत्मसातीकरण के माध्यम से व्यक्ति सत्ता को 'नॉर्मल' ढंग से स्वीकार करता रहता है। शासकीयता इसी 'नार्मलाइज़ेशन' के माध्यम से व्यक्ति को 'सब्जेक्ट' में बदलती है। सब्जेक्ट एक ऐसी अभिव्यक्ति है जिसका एक अर्थ है स्वतंत्र कर्त्ता और दूसरा है शासित प्रजा का सदस्य। फ़ूको का मतलब यह है कि विमर्श के ज़रिये सब्जेक्ट में बदलते ही व्यक्ति शासकीयता की कारगुज़ारियों की मातहती में चला जाता है।

नारीवादी विद्वान सत्ता को पितृसत्ता की अवधारणा की रोशनी में परखते हैं। पितृसत्ता प्रभुत्व की एक ऐसी सर्वव्यापी संरचना है जो हर स्तर पर काम करती है। पितृसत्ता के तहत कोई स्त्री व्यक्तिगत स्तर पर सत्तावान भी हो सकती है। लेकिन उसे

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

पितृसत्तात्मक शासन द्वारा तय की गयी सीमाओं में ही काम करना होगा। मसलन, घर के दायरे में स्त्री सास के रूप में तो एक हद तक सत्ताधारी हो सकती है, पर बेटी, बहू, पत्नी या बहिन के रूप में नहीं। हर जगह उसकी स्थिति पुरुष के सापेक्ष और उसके साथ संबंध के तहत ही परिभाषित होने के लिए मजबूर है। अकेली और पृथक् कोई अस्मिता न होने के कारण वह अदृश्य और सत्ता से वंचित होने के लिए अभिशप्त है। [14,15]

नारीवादियों के मुताबिक पितृसत्ता की कोई ऐसी समरूप संरचना नहीं होती जो हर जगह एक ही रूप में मिलती हो। इतिहास, भूगोल और संस्कृति के मुताबिक उसके भिन्न-भिन्न रूप मिलते हैं। इसके अलावा पितृसत्ता शोषण और प्रभुत्व के अन्य रूपों (वर्ग, जाति, साम्राज्यवाद, नस्ल आदि) के साथ परस्परव्यापी भी है। हर जगह उसके प्रभाव अलग-अलग निकलते हैं। एक अमेरिकी श्वेत स्त्री और भारतीय दलित स्त्री को पितृसत्ता का उत्पीड़न अलग-अलग ढंग से झेलना पड़ता है।हान्ना एरेंत सत्ता को केवल प्रभुत्व की संरचना के तौर पर देखने के लिए तैयार नहीं हैं। अपनी रचना 'व्हाट इज़ अथॉरिटी?' में वे सत्ता को एक बढ़ी हुई क्षमता के रूप में व्याख्यायित करती हैं जो सामूहिक कार्रवाई के ज़रिये हासिल की जाती है। लोग जब आपस में संवाद स्थापित करते हैं और मिल-जुल कर एक साझा उद्यम की ख़ातिर कदम उठाते हैं तो उस प्रक्रिया में सत्ता उद्भूत होती है। सत्ता का यह रूप वह आधार मुहैया कराता है जिस पर खड़े हो कर व्यक्ति नैतिक उत्तरदायित्व का वहन करते हुए सक्रिय होता है।

मानवाधिकार (human rights) वे नैतिक सिद्धान्त हैं जो मानव व्यवहार से सम्बन्धित कुछ निश्चित मानक स्थापित करता है। ये मानवाधिकार स्थानीय तथा अन्तरराष्ट्रीय कानूनों द्वारा नियमित रूप से रक्षित होते हैं। ये अधिकार प्रायः ऐसे 'आधारभूत अधिकार' हैं जिन्हें प्रायः 'न छीने जाने योग्य' माना जाता है और यह भी माना जाता है कि ये अधिकार किसी व्यक्ति के जन्मजात अधिकार हैं। व्यक्ति के आयु, प्रजातीय मूल, निवास-स्थान, भाषा, धर्म, आदि का इन अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं होता। ये अधिकार सदा और सर्वत्र देय हैं तथा सबके लिए समान हैं। अनेक प्राचीन दस्तावेजों एवं बाद के धार्मिक और दार्शनिक पुस्तकों में ऐसी अनेक अवधारणाएं है जिन्हें मानवाधिकार के रूप में चिन्हित किया जा सकता है। ऐसे प्रलेखों में उल्लेखनीय हैं अशोक के आदेश पत्र, श्री राम द्वारा निर्मित अयोध्या का संविधान (राम राज्य) आदि।

आधुनिक मानवाधिकार कानून तथा मानवाधिकार की अधिकांश अपेक्षाकृत व्यवस्थाएं समसामयिक इतिहास से संबंध हैं। द ट्रेल्व आर्टिकल्स ऑफ़ द ब्लैक फॉरेस्ट (1525) को यूरोप में मानवाधिकारों का सर्वप्रथम दस्तावेज़ माना जाता है। यह जर्मनी के किसान - विद्रोह (Peasants' War) स्वाबियन संघ के समक्ष उठाई गई किसानों की मांग का ही एक हिस्सा है। ब्रिटिश बिल ऑफ़ राइट्स ने युनाइटेड किंगडम में सिलसिलेवार तरीके से सरकारी दमनकारी कार्रवाइयों को अवैध करार दिया. 1776 में संयुक्त राज्य में और 1789 में फ्रांस में 18 वीं शताब्दी के दौरान दो प्रमुख क्रांतियां घटीं. जिसके फलस्वरूप क्रमशः संयुक्त राज्य की स्वतंत्रता की घोषणा एवं फ्रांसीसी मनुष्य की मानव तथा नागरिकों के अधिकारों की घोषणा का अभिग्रहण हुआ। इन दोनों क्रांतियों ने ही कुछ निश्चित कानूनी अधिकार की स्थापना की।

"मानवाधिकारों" को लेकर अक्सर विवाद बना रहता है। ये समझ पाना मुश्किल हो जाता है कि क्या वाकई में मानवाधिकारों की सार्थकता है। यह कितना दुर्भाग्यपूर्ण है कि तमाम प्रादेशिक, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सरकारी और गैर सरकारी मानवाधिकार संगठनों के बावजूद मानवाधिकारों का परिदृश्य तमाम तरह की विसंगतियों और विद्रूपताओं से भरा पड़ा है। किसी भी इंसान की जिंदगी, आजादी, बराबरी और सम्मान का अधिकार है मानवाधिकार है। भारतीय संविधान इस अधिकार की न सिर्फ गारंटी देता है, बल्कि इसे तोड़ने वाले को अदालत सजा देती है।मानवाधिकार' शब्द का प्रयोग 20वीं शताब्दी में किया गया था। इसके पहले अधिकारों के संदर्भ में 'प्राकृतिक अधिकार' अथवा 'व्यक्ति के अधिकार' शब्द प्रचलन में थे।[16,17] प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धांत की उत्पत्ति 17वीं शताब्दी में प्रसिद्ध दार्शनिकों ग्रोशियस, हॉब्स और लॉक की रचनाओं में हुई थी। उन्होंने बताया था कि प्राकृतिक अधिकारों का मुख्य आधार 'प्राकृतिक कानून' हैं। यह कानून प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता तथा संपत्ति का सम्मान करने की बात कहते हैं। जॉन लॉक ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "दी टू ट्रीटसेज़ ऑन गवर्नमेंट" में इन प्राकृतिक सिद्धांतों का उल्लेख किया है।इसके अलावा, 1776 में अमेरिका द्वारा स्वतंत्रता के संबंध में जारी किये गए घोषणापत्र में भी कहा गया था कि 'सभी व्यक्ति समान पैदा हुए हैं तथा सृष्टिकर्ता ने उन्हें जीवन, स्वतंत्रता तथा

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

सुख की प्राप्ति जैसे कुछ अदेय अधिकार प्रदान किये हैं।' तत्पश्चात 1789 में फ्रांस द्वारा घोषित मानव और नागरिक अधिकारों के घोषणापत्र में एक बार फिर व्यक्ति के अधिकारों की प्राकृतिक व अदेयता की बात कही गई थी। इन देशों ने अपने नागरिकों को ये अधिकार एक व्यक्ति होने के नाते दिया था न कि एक राज्य होने के नाते।17वीं और 18वीं शताब्दी में प्राकृतिक अधिकारों से संबंधित जो घोषणाएँ की गई थीं; 20वीं शताब्दी में संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकार घोषणापत्र और इनसे संबंधित कई अन्य समझौतों के माध्यम से उन्हीं का और विस्तार किया गया। आसान भाषा में कहें तो मानवाधिकार पुराने प्राकृतिक अधिकारों के ही उत्तराधिकारी हैं।

वैसे तो मानव अधिकारों की कोई एक निश्चित संख्या नहीं है। विविध प्रकार के समाजों में जैसे-जैसे नए खतरे और चुनौतियाँ सामने आ रहीं हैं, वैसे-वैसे मानवाधिकारों की सूची लगातार बढ़ती जा रही है। यहाँ पर हम संयुक्त राष्ट्र के सार्वभौमिक घोषणापत्र में उल्लिखित मानवाधिकारों के बारे में जानेंगे। इस घोषणापत्र में कुल 30 अनुच्छेद हैं, जिनमें उल्लिखित मानवाधिकारों को सामान्य तौर पर नागरिक-राजनीतिक और आर्थिक-सामाजिक-सांस्कृतिक श्रेणियों में बाँटा गया है। इसके अनुच्छेद-3 में व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं सुरक्षा के अधिकारों की बात कही गई है जो अन्य सभी अधिकारों के उपभोग के लिये ज़रूरी हैं।[18,19]

नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार- सार्वभौमिक घोषणापत्र में अनुच्छेद 4 से लेकर अनुच्छेद 21 तक नागरिक व राजनीतिक अधिकारों के बारे में विस्तार से बताया गया है। इनके अन्तर्गत आने वाले प्रमुख अधिकार इस प्रकार हैं-

- दासता से मुक्ति का अधिकार
- निर्दयी, अमानवीय व्यवहार अथवा सजा से मुक्ति का अधिकार
- कानून के समक्ष समानता का अधिकार
- प्रभावशाली न्यायिक उपचार का अधिकार
- आवागमन तथा निवास स्थान चुनने की स्वतंत्रता
- शादी करके घर बसाने का अधिकार
- विचार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता
- उचित निष्पक्ष मुकदमें का अधिकार
- मनमर्जी की गिरफ्तारी अथवा बंदीकरण से मुक्ति का अधिकार
- न्यायालय द्वारा सार्वजनिक सुनवाई का अधिकार
- अपराधी साबित होने से पहले बेगुनाह माने जाने का अधिकार
- व्यक्ति की गोपनीयता, घर,परिवार तथा पत्र व्यवहार में अवांछनीय हस्तक्षेप पर प्रतिबंध
- शांतिपूर्ण ढंग से किसी स्थान पर इकट्ठा होने का अधिकार
- शरणागति प्राप्त करने का अधिकार

- राष्ट्रीयता का अधिकार
- अपने देश की सरकारी गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार
- अपने देश की सार्वजनिक सेवाओं तक सामान पहुँच का अधिकार[20,21]

आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकार- नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों के अतिरिक्त, घोषणापत्र के अगले छह अनुच्छेदों में आर्थिक,सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों के बारे में बताया गया है। इनके अंतर्गत आने वाले प्रमुख अधिकार निम्नलिखित हैं-

- सामाजिक सुरक्षा का अधिकार
- समान काम के लिये समान वेतन का अधिकार
- काम करने का अधिकार
- आराम तथा फुर्सत का अधिकार
- शिक्षा तथा समाज के सांस्कृतिक जीवन में भाग लेने का अधिकार

सत्ता की अनेक परिभाषाएँ और व्याख्याएँ की गई हैं, किंतु सभी रूपों में सत्ता शक्ति, प्रभाव एवं नेतृत्त्व से जुड़ी हुई हैं जब शक्ति को वैधानिक स्वीकृति मिल जाती है तो उसे सत्ता कहते हैं। [22,23]

बीरस्टीड भी कहते हैं कि सत्ता शक्ति से भिन्न होती है। सत्ता शक्ति के प्रयोग का संस्थात्मक अधिकार है, वह स्वयं शक्ति नहीं है। सत्ता का संबंध पद या प्रस्थिति से होता है जबकि शक्ति का व्यक्ति से। सत्ता सदैव संस्थाकृत होती है अतः विशिष्ट रूप से मूल्यवान समझी जाती है। सत्ता वैधानिक शक्ति है जिसका पालन व्यक्ति स्वेच्छा से करता है। उदाहरणार्थ, प्राचार्य, राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मेजर, आदि के अधिकार 'सत्ता' की श्रेणी में आएँगे, क्योंकि उन्हें जो अधिकार और शक्ति प्राप्त हैं, वह संविधान, नियमों, कानूनों, आदि के द्वारा प्राप्त है। इस प्रकार शक्ति और सत्ता दोनों ही प्रभाव के विभिन्न स्वरूप हैं। सत्ता समाज में दायित्व बनाए रखती है। यह केवल राजनीतिक क्षेत्र में ही नहीं, वरन् सामाजिक-आर्थिक जीवन में भी क्रियाशील रहती है। सत्ता शक्ति का संस्थागत रूप है।

बीच दूसरे के कार्य निष्पादन को प्रभावित या निर्देशित करने के औचित्यपूर्ण अधिकार को सत्ता कहता है। सत्ता को इसलिए स्वीकार नहीं किया जाता है कि वह सत्ताधारियों द्वारा दी जाती है। इसका वास्तविक आधार अधीनस्थ अथवा जिन्हें निर्देश दिए जाते हैं, उनकी सहमति होती है। सत्ता सामान्य स्वीकृति के साथ शक्ति के प्रयोग को कहते हैं। [24,25]
सत्ता की निम्नांकित विशेषताएं प्रकट होती हैं-

1. सत्ता प्रभाव और शक्ति का एक ही रूप है।
2. सत्ता में शक्ति को वैधानिक स्वीकृति प्राप्त होती है।
3. सत्ता शक्ति का संस्थागत रूप है।
4. सत्ता का संबंध व्यक्ति से न होकर प्रस्थिति से होता है।
5. सत्ता हमें सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सभी क्षेत्रों में देखने को मिलती है।

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

6. सत्ता में शक्ति को न्याय, नैतिकता, धर्म एवं अन्य सांस्कृतिक मूल्यों द्वारा उचित ठहराया जाता है।
7. सत्ता को आदेश देने का अधिकार माना जाता है और सत्ता का प्रवाह उफपर से नीचे की ओर होता है। सत्ता के पीछे व्यवस्था या संगठन की वैध शक्ति होती है। सत्ताधारी संगठन में अंतर्निहित शक्ति का प्रतीक माना जाता है। मैकाइवर इसे शासन का जादू कहते हैं।
8. सत्ता कानूनी रूप से तो औपचारिक होती है, ¯कतु वास्तव में आदेश की सफलता अधीनस्थों पर निर्भर है। जब अधीनस्थ अपनी समझ एवं योग्यता के आधार पर आदेशों को स्वीकार कर लेते हैं तो यह स्थिति सत्ता बन जाती है।

परिणाम

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान मानवाधिकारों का जमकर उल्लंघन किया गया था। इस कारण से भविष्य में मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु ठोस व्यवस्था किये जाने की ज़रूरत महसूस हुई और 10 दिसंबर 1948 को संयुक्त राष्ट्र की सामान्य सभा ने मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को स्वीकार कर लिया। सामान्य सभा ने सभी सदस्य देशों से इस घोषणा-पत्र को प्रसारित करने का आह्वान किया था। मानवाधिकारों की रक्षा से संबंधित संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में 48 देशों ने हस्ताक्षर किये थे जिनमें भारत भी शामिल था। लेकिन भारत में मानवाधिकारों से जुड़ी एक स्वतंत्र संस्था बनाने में 45 वर्ष लग गए। 12 अक्टूबर 1993 में मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के तहत राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) का गठन किया गया। इसके अलावा, राज्यों में भी मानवाधिकार आयोगों के गठन का प्रावधान किया गया। चलिये जानते हैं NHRC के बारे में-

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (National Human Rights Commission)[26,27]

- मानव अधिकारों के संरक्षण के मामले में यह देश की सर्वोच्च संस्था है।
- यह एक सांविधिक निकाय है, जिसका गठन 1991 के पेरिस सिद्धांतों के मुताबिक हुआ है।
- मानवाधिकारों के उल्लंघन की शिकायत मिलने पर NHRC स्वयं अपनी पहल पर या पीड़ित व्यक्ति की याचिका पर जाँच कर सकता है।
- इस आयोग के कार्य-क्षेत्र में जेलों में बंदियों की स्थिति का अध्ययन करना, न्यायिक व पुलिस हिरासत में हुई मृत्यु की जाँच-पड़ताल करना, महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार और लोगों के गायब होने आदि मामलों की जाँच करना शामिल है।
- मानवाधिकार के क्षेत्र में शोध कार्य करना या शोध को बढ़ावा देना और लोगों को मानवाधिकारों के प्रति जागरूक करना भी इस आयोग के कार्यों में शामिल है।
- यह आयोग मानवाधिकार से जुड़ी अंतर्राष्ट्रीय संधियों, सम्मेलनों और रिपोर्ट्स का अध्ययन कर उनके प्रभावी अनुपालन की सिफारिश भी करता है।
- इनके अलावा भी NHRC के कई कार्य हैं।

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

NHRC की सीमाएँ

- आमतौर पर NHRC की तुलना बिना नाखूनों और बिना दाँतों वाले शेर से की जाती है, जो कहने को तो शेर होता है लेकिन उसकी शक्तियाँ न के बराबर होती हैं। इस तुलना का कारण यह है कि मानवाधिकारों के उल्लंघन के मामले में यह आयोग न तो किसी को दंडित कर सकता है और न ही किसी को मुआवजा दे सकता है। यह केवल अपनी जाँच के आधार पर सरकार या न्यायालय से मुकदमे की सुनवाई की सिफारिश कर सकता है। इतना ही नहीं, केंद्र और राज्य सरकारें आयोग की सिफारिशें मानने के लिये बाध्य नहीं हैं।
- आयोग उन शिकायतों की जाँच नहीं कर सकता जो घटना होने के एक साल बाद दर्ज कराई गईं हों। साथ ही, आयोग के पास सैन्य बलों द्वारा मानवाधिकार के उल्लंघन के मामलों की जाँच का अधिकार भी नहीं है।
- बड़ी संख्या में पदों का खाली पड़े रहना, संसाधनों व धन की कमी, आयोगों के अंदर सदस्यों का नौकरशाही ढर्रे पर काम करना, पुलिस व अन्य जाँच एजेंसियों का पूरी तरह से सहयोग न करना आदि आयोग की राह में रुकावट का बड़ा कारण हैं।

मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाले शीर्ष देश

साल 2011 के एक सर्वे के मुताबिक, दुनिया में मानवाधिकारों का उल्लंघन करने के मामलों में इजिप्ट, सीरिया, यमन, चीन, ईरान, उत्तर कोरिया, मध्य अफ्रीकी गणराज्य, बुरुंडी, काँगो गणराज्य, बर्मा, लीबिया,वेनेज़ुएला, इरीट्रिया, रूस और नाइजीरिया शीर्ष पर हैं।

आगे की राह

- NHRC को एक मजबूत और शक्तिशाली संस्था बनाने के लिये द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (ARC) ने अपनी रिपोर्ट में कई सिफारिशें की हैं। रिपोर्ट के अनुसार, आयोग को विभिन्न सांविधिक आयोगों के समक्ष शिकायत करने के लिये एक समान प्रारूप तैयार किया जाए। इसके लिये पीड़ितों का विवरण इस तरह से दिया जाए कि विभिन्न आयोगों के बीच डेटा का ताल-मेल सही रहे।
- शिकायतों के ज़ल्द से ज़ल्द समाधान के लिये आयोग की शक्तियों को बढ़ाया जाए।
- आयोग में संसाधनों व धन की कमी को दूर किया जाए।
- आयोग में टास्क फोर्स जैसे किसी कार्यकारी समूह का गठन किया जाए, जो तुरंत कार्रवाई कर सके।
- सरकारों, पुलिस, न्यायपालिका व अन्य जाँच एजेंसियों द्वारा आयोग के साथ सहयोगात्मक रवैया अपनाया जाना चाहिये, जिससे आयोग अपना कार्य बिना किसी बाधा के कर सके।

इन सबके साथ हमें यह भी नहीं भूलना चाहिये कि, अगर कोई कार्य हमारे स्वास्थ्य एवं कल्याण के साथ दूसरों के लिये भी नुकसानदेह है तो उसे अधिकार नहीं माना जा सकता है। केवल मानवाधिकार आयोग द्वारा शिकायतों का निवारण करने से ही मानव अधिकारों का संरक्षण नहीं हो पायेगा; लोगों को भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक रहना होगा। साथ ही, यह भी ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है कि आपको अपने अधिकारों के प्रति जागरूक रहते हुए दूसरों के अधिकारों का सम्मान भी करना है। अर्थात जो आज़ादी, समानता, प्रतिष्ठा, शांति आप अपने लिये चाहते हैं, वह दूसरों को भी दें। तब जाकर हम सब अपने मानवाधिकारों का विकास और संरक्षण कर पाएँगे।[28]

DOI: 10.15680/IJIRSET.2014.0310113

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

सत्ता निर्णय लेने की वह शक्ति है हो दूसरे के कार्यों का पथ-प्रदर्शन करती है। सत्ता औपचारिक, निश्चित व विशिष्ट होती है। इसका स्वरूप वैधानिक एवं संगठनात्मक है। इसकी प्रकृति के बारे में दो सिद्धान्त -

1. औपचारिक सत्ता सिद्धान्त - सत्ता का प्रभाव ऊपर से नीचे की तरफ चलता हैं सत्ता को आदेश देने व नौकरशाही का गठन करने का अधिकार है। इस सिद्धान्त के अनुसार शक्ति व्यवस्था बनाए रखने के लिए औचित्यपूर्णता को साथ लेकर चलती है।

2. स्वीकृति सिद्धान्त - सत्ता वैधानिक रूप से केवल औपचारिक होती है और इसे वास्तविक आधार तभी प्राप्त होता है, जब अधीनस्थों द्वारा इसकी स्वीकृति हो जाए। किन्तु अधीनस्थों में सत्ता की स्थिति को समझने की योग्यता अवश्य होनी चाहिए।
सत्ता के प्रमुख घटक दो हैं :-

1. शक्ति (Power) - जब शक्ति को जनता का औचित्यपूर्ण समर्थन मिल जाता है तो इसे वैधता प्राप्त हो जाती है। शक्ति का अर्थ, अपनी इच्छानुसार दूसरों से अपने आदेश का पालन कराना होता है।

2. वैधता (Legitimacy) - समाज में व्यवस्था कायम रखने के लिए शक्ति और वैधता दोनों एक दूसरी की मदद करते हैं। सत्ता को प्रभावी रखने के लिए शक्ति और औचित्यपूर्ण दोनों ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

निष्कर्ष

विभिन्न स्रोतों के अनुसार सत्ता के विविध रूप हो जाते हैं। सत्ता को औचित्यपूर्णता के अनुसार मैक्स वेबर ने आधुनिक राज्य में तीन तरह की बताया है :-

1. परम्परागत सत्ता (Traditional Authority)
2. कानूनी विवेकपूर्ण या तर्कसंगत सत्ता (Legal7Rational Authority)
3. करिश्माई सत्ता (Charismatic Authority)[29]

1. परम्परागत सत्ता

यह सत्ता परम्परागत शक्ति ढांचे से जन्म लेती है। जब प्रजा या अधीनस्थ कर्मचारी अपने शासक या वरिष्ठ अधिकारियों की आज्ञा या आदेशों का पालन करते हैं तो वह परम्परागत सत्ता होती है। ऐसा करना एक परम्परा बन जाती है। इस सत्ता का आधार यह है कि जो व्यक्ति या वंश आदेश देने का अधिकार रखता है, वह प्रचलित परम्परा पर ही आधारित होता है। इस प्रकार की सत्ता में प्रत्यायोजन अस्थाई और स्वेच्छाचारी होता है। राजतन्त्र में इसी प्रकार की सत्ता प्रचलित होती है। प्रशासनिक दृष्टि से अधीनस्थ वर्ग आने वरिष्ठों की बात इसलिए मानता है कि ऐसा युगों से होता आया है। इस प्रकार की सत्ता में शासक या वरिष्ठ कर्मचारियों का जनता या अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा स्वेच्छापूर्वक आँख बन्द करके पालन किया जाता है।
इस प्रकार की सत्ता नेपाल व ब्रिटेन में युगों से प्रचलित है।

2. कानूनी-विवेकपूर्ण सत्ता
इस सत्ता का आधार शासक या प्रशासनिक अधिकारी का राजनीतिक पद होता है। आधुनिक नौकरशाही इसी प्रकार की सत्ता को प्रकट करती है। इसमें प्रत्यायोजन स्थाई व बौद्धिक होता है। इसमें कुर्सी या पद का सम्मान किया जाता है, व्यक्ति का नहीं। इसमें औपचारिक सम्बन्धों का महत्व समझा जाता है। इसमें समस्त कार्य-व्यवहार कानून की परिधि में ही किया जाता है। इसमें

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

संवैधानिक नियमों के अनुसार प्रशासनिक व राजनीतिक पद का प्रयोग किया जाता है। कोई भी व्यक्ति कानून से बड़ा नहीं होता। इस प्रकार की सत्ता का आधार कानून का शासन होता है। अमेरिका का राष्ट्रपति व भारत का प्रधानमन्त्री इसी प्रकार की सत्ता का प्रयोग करते हैं। इसमें सब कुछ कानूनी सीमा के अन्तर्गत ही होता है।

3. करिश्माई सत्ता

इस प्रकार सत्ता में अनुयायी अपने नेता के कहने पर कुछ भी करने को तैयार हो जाते हैं। उनके लिए नेता के शब्द वेद-वाक्य हैं। इस प्रकार की सत्ता धार्मिक और युद्ध के क्षेत्र में अधिक प्रभावी रहती है। यह सत्ता विशेष परिस्थितियों की उपज होती है। चीन में माओ, जर्मनी में हिटलर, इटली में मुसोलिनी, स्पेन में जनरल फ्रांकों, भारत में पंडित जवाहरलाल नेहरु, इन्दिरा गांधी, महात्मा गांधी, सुभाषचन्द्र बोस, मिश्र में कर्नल नासिर, युगोस्लाविया में मार्शल टीटो, अफ्रीका में नेल्सन मंडेला, रूस में स्टालिन और लेनिन, ईराक में सद्दाम हुसैन इस प्रकार की सत्ता के प्रमुख उदाहरण हैं।

सत्ता के कार्य

इसके प्रमुख कार्य हैं :-

1. सत्ता शासन के विभिन्न अंगों में तनाव व टकराहट दूर करके समन्वय उत्पन्न करती है।
2. सत्ता शासन के विभिन्न अंगों में अनुशासन कायम रखती है।
3. सत्ता कार्य-निष्पादन के लिए अपने लक्ष्यों और उद्देश्यों के अनुरुप निर्णय लेती है।
4. सत्ता अपनी शक्ति के सदुपयोग के लिए अपने अधीनस्थों पर नियन्त्रण रखती है।
5. सत्ता शासन व प्रशासन को सुचारु रूप से चलाने के लिए प्रत्यायोजन भी करती है।
6. सत्ता राष्ट्रीय विकास के लक्ष्य को पूरा करने व प्राप्त करने का प्रयास करती है।

इस प्रकार सत्ता अपने लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न विभागों व अपने अधीनस्थों में समन्वय, समायोजन, नियन्त्रण व अनुशासन करती है। इसके लिए वह विभिन्न संचार साधनों व क्रियाविधियों का प्रयोग करती है।

सत्ता की सीमाएं

सत्ता अपनी शक्ति को कभी भी निरंकुश, मनमाने व निरुद्देश्य तरीके से प्रयुक्त नहीं कर सकती है, क्योंकि उस पर कुछ प्रतिबन्ध या सीमाएं लगाई जाती हैं। आज विश्व में मानवीय अधिकारों के प्रति आम व्यक्ति में जागरूकता बढ़ी है और राजनीतिक चेतना का भी विकास हुआ है। इसलिए सत्ता को अपनी मर्यादाओं में रहकर ही कार्य करना पड़ता है। सत्ता को निरंकुश बनने से रोकने के लिए इस पर आन्तरिक या बाह्य, प्राकृतिक, उद्देश्यगत या प्रक्रिया सम्बन्धी प्रतिबन्ध लगाए गए हैं। औचित्वपूर्णता के बिना सत्ता का कोई महत्व नहीं रह जाता है। इसलिए सत्ता को स्वयं को वैध या औचित्यपूर्ण ही बनाए रखना पड़ता है। अपने को औचित्यपूर्ण बनाए रखने के लिए उसे संविधानिक कानूनों एवं राजनीतिक परिस्थितियों में रहकर ही कार्य करना पड़ता है। प्रत्येक व्यवसाय संस्कृति, मूल्यों, परम्पराओं, रुढ़ियों से बंधी होने के कारण सत्ता पर प्रतिबन्ध लगाने को बाध्य होती है। आज अन्तर्राष्ट्रीयता के युग में अन्तर्राष्ट्रीय विधियों, संगठनों, सन्धियों, समझौतों आदि का राष्ट्रीय सत्ताओं पर प्रतिबन्ध है। कोई भी देश विश्व जनमत की अवहेलना नहीं कर सकता। मानव अधिकार आयोग के अन्तर्राष्ट्रीय दबाव के कारण सत्ता कोई भी निरंकुश कार्य नहीं कर सकती है। राष्ट्रीय स्तर पर भी विभिन्न प्रकार के संगठनों, दबाव समूहों, छात्र-संघों, प्रतिपक्ष, प्रैस, न्यायपालिका, जनमत आदि का सत्ता पर प्रभाव रहता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सत्ता का कार्यक्षेत्र असीमित व निरंकुश न होकर प्रतिबन्धों से मर्यादित है।[30]

ISSN(Online) : 2319-8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 3, Issue 12, December 2014

संदर्भ

1) एमनेस्टी इंटरनेशनल (2004)। एमनेस्टी इंटरनेशनल रिपोर्ट । अंतराष्ट्रिय क्षमा। आईएसबीएन 0-86210-354-1 आईएसबीएन 1-887204-40-7
2) एलस्टन, फिलिप (2005)। "शिप्स पासिंग इन द नाइट: द करंट स्टेट ऑफ़ द ह्यूमन राइट्स एंड डेवलपमेंट डिबेट सीन थ्रू द लेंस ऑफ़ द मिलेनियम डेवलपमेंट गोल्स"। मानवाधिकार त्रैमासिक । 27 (3): 755–829। डीओआई : 10.1353/एचआरक्यू.2005.0030 । एस 2 सीआईडी 145803790 .
3) अर्नहार्ट, लैरी (1998)। डार्विनियन नेचुरल राइट: द बायोलॉजिकल एथिक्स ऑफ़ ह्यूमन नेचर । सनी प्रेस। आईएसबीएन 0-7914-3693-4.
4) बॉल, ओलिविया; ग्रेडी, पॉल (2007)। मानव अधिकारों के लिए नो-नॉनसेंस गाइड । नया अंतर्राष्ट्रीयवादी। आईएसबीएन 978-1-904456-45-2.
5) चौहान, ओपी (2004)। मानव अधिकार: संवर्धन और संरक्षण । अनमोल प्रकाशन प्रा। लिमिटेड आईएसबीएन 81-261-2119-एक्स ।
6) क्लेटन, फिलिप; श्लॉस, जेफरी (2004)। विकास और नैतिकता: जैविक और धार्मिक परिप्रेक्ष्य में मानव नैतिकता । Wm। बी एर्डमैन्स प्रकाशन। आईएसबीएन 0-8028-2695-4.
7) कोप, के., क्रैबट्री, सी., और फारिस, सी. (2011)। "पैटर्न ऑफ डिसएमिनेशन इन इंडिकेटर्स ऑफ स्टेट रिप्रेशन" पोलिटिकल साइंस रिसर्च एंड मेथड्स , 8(1), 178-187। डीओआई : 10.1017/पीएसआरएम.2011.62
8) क्रॉस, फ्रैंक बी। "मानवाधिकार संरक्षण में कानून की प्रासंगिकता।" कानून और अर्थशास्त्र की अंतर्राष्ट्रीय समीक्षा 19.1 (1999): 87–98 ऑनलाइन संग्रहीत 22 अप्रैल 2011 वेबैक मशीन पर ।
9) डेवनपोर्ट, क्रिश्चियन (2007)। राज्य दमन और राजनीतिक व्यवस्था। राजनीति विज्ञान की वार्षिक समीक्षा।
10) डोनेली, जैक। (2003)। सिद्धांत और व्यवहार में सार्वभौमिक मानव अधिकार। दूसरा संस्करण। इथाका और लंदन: कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस। आईएसबीएन 0-8014-8776-5
11) फिनिस, जॉन (1980)। प्राकृतिक कानून और प्राकृतिक अधिकार । ऑक्सफोर्ड: क्लेरेंडन प्रेस। आईएसबीएन 0-19-876110-4.
12) फोमेरैंड, जैक्स। ईडी। मानवाधिकारों का ऐतिहासिक शब्दकोश (2011) अंश
13) फ़ोर्सिथ, डेविड पी. (2000). अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में मानवाधिकार। कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस। अंतर्राष्ट्रीय प्रगति संगठन। आईएसबीएन 3-900704-08-2
14) फ्रीडमैन, लिन पी.; इसहाक, स्टीफन एल. (जनवरी-फरवरी 1993)। "मानवाधिकार और प्रजनन विकल्प"। परिवार नियोजन में अध्ययन Vol.24 (नंबर 1): पी। 18–30 जेएसटीओआर 2939211
15) ग्लेंडन, मैरी एन (2001)। ए वर्ल्ड मेड न्यू: एलेनोर रूजवेल्ट एंड द यूनिवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स । रैंडम हाउस ऑफ कनाडा लिमिटेड आईएसबीएन 0-375-50692-6.
16) गोर्मन, रॉबर्ट एफ. और एडवर्ड एस. मिहालकानिन, एड। मानवाधिकार और मानवीय संगठनों का ऐतिहासिक शब्दकोश (2007) अंश
17) ह्यूटन मिफिन कंपनी (2006)। द अमेरिकन हेरिटेज डिक्शनरी ऑफ द इंग्लिश लैंग्वेज । ह्यूटन मिफिन। आईएसबीएन 0-618-70173-7
18) इग्नाटिएफ़, माइकल (2001)। राजनीति और मूर्तिपूजा के रूप में मानवाधिकार । प्रिंसटन और ऑक्सफोर्ड: प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस। आईएसबीएन 0-691-08893-4.
19) ईशाय, मिशेलिन। द हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमन राइट्स: फ्रॉम एनशिएंट टाइम्स टू द एरा ऑफ़ ग्लोबलाइज़ेशन (यू ऑफ़ कैलिफोर्निया प्रेस, 2008) अंश

20) इस्तरेफी, रेमजीजे। "कोसोवो में अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा उपस्थिति और इसके मानवाधिकार प्रभाव।" क्रोएशियाई अंतर्राष्ट्रीय संबंध समीक्षा 23.80 (2011): 131-154। ऑनलाइन
21) जाफ़ा, हैरी वी. (1979). थॉमिज़्म और अरिस्टोटेलियनिज़्म; निकोमाचियन एथिक्स पर थॉमस एक्विनास द्वारा कमेंट्री का एक अध्ययन । ग्रीनवुड प्रेस। आईएसबीएन 0-313-21149-3.(शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस द्वारा प्रकाशित 1952 संस्करण का पुनर्मुद्रण)
22) जान, बीट (2005)। "बारबेरियन विचार: जॉन स्टुअर्ट मिल के दर्शन में साम्राज्यवाद"। अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन की समीक्षा । कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस। 31 : 599–618.
23) कोचलर, हंस (1981)। अंतर्राष्ट्रीय कानून और मानव अधिकारों के सिद्धांत । hanskoechler.com
24) कोचलर, हंस । (1990)। "लोकतंत्र और मानव अधिकार"। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में अध्ययन, XV। वियना: अंतर्राष्ट्रीय प्रगति संगठन।
25) कोहेन, एरी (2007)। मानव अधिकारों की रक्षा में: एक बहुलवादी दुनिया में एक गैर-धार्मिक ग्राउंडिंग । रूटलेज। आईएसबीएन 0-415-42011-6, 978-0-415-42011-0 .
26) लैंडमैन, टोड (2006)। मानव अधिकारों का अध्ययन । ऑक्सफोर्ड और लंदन: रूटलेज आईएसबीएन 0-415-32605-2
27) प्रकाश, डोनाल्ड डब्ल्यू। (2002)। "स्वास्थ्य देखभाल के लिए सार्वभौमिक पहुंच के लिए एक रूढ़िवादी आह्वान" । पेन बायोएथिक्स । 9 (4): 4–6।
28) लिटमैन, डेविड (1999)। "सार्वभौमिक मानवाधिकार और 'इस्लाम में मानवाधिकार'"। मिडस्ट्रीम मैगज़ीन । वॉल्यूम 2, नंबर 2। पीपी। 2–7।
29) मान, बशीर ; मैकिन्टोश, एलिस्टेयर (1999)। "विलियम मोंटगोमरी वाट के साथ साक्षात्कार" द कोराकल वॉल्यूम। 3 (संख्या 51) पीपी। 8-11।
30) मेरेट, सुसान 2005। "'प्रारूप सत्य की खोज के लिए एक उपकरण हैं': पुस्तकालय और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं के लिए HURIDOCS मानवाधिकार सामग्री।" प्रोग्रेसिव लाइब्रेरियन , नहीं। 26 (सर्दी): 33-39।